1 सूर की भाषा – ब्रजभाषा का साहित्य रूप 1

सूर पूर्व ब्रजभाषा :– सूर के पूर्व की ब्रजभाषा "भाखा" के रूप में थी। उर्दू के प्राचीन लेखकों ने भी ब्रजभाषा को भाखा कहा है। साहित्य के क्षेत्र में इसका सर्वप्रथम प्रयोग चन्दवरदाई के पृथ्वीराज की वचनिकाओं में मिलता है। शौरसेनी अपभ्रंश से ब्रजभाषा का विकास 1000 ई० के आस पास हुआ किन्तु 1500 ई० के लगभग यह पूर्णतया अपने पैरों पर खड़ी होकर गोरखनाथ की बानियों में ब्रजभाषा का ऊबड़-खाबड़ शब्द है। उनकी भाषा कबीर की भाँति सधुक्कड़ी और नाथपंथी पदावली से संयुक्त है।

साहित्यिक ब्रजभाषा का सूत्रपात :–

इस प्रकार संतों की वाणी में हमें ब्रजभाषा का सूरपूर्व रूप मिलता है। जिसमें साहित्यिकता का अभाव है। उसमें सौन्दर्य का अभाव है। महाप्रभु वल्लभाचार्य द्वारा प्रयुक्त ब्रजभाषा भी साधारण ही थी। उसमें धर्म प्रचार के उद्देश्य से सरलता और सुबोधता को विशेष महत्व दिया गया। सूरदास ने ही सर्वप्रथम ब्रजभाषा को साहित्यिक रूप प्रदान किया। उन्होंने अपने गीतिकाव्य में संस्कृत मिश्रित साहित्यिक भाषा का प्रयोग किया। यद्यपि उन्होंने बोलचाल के गवाँरू शब्द भी प्रयुक्त किए हैं किन्तु उनकी भाषा अंततः साहित्यिक है और उनके लिखने का ढंग अत्यंत प्रौढ़ एवं पांडित्यपूर्ण है। डा० धीरेन्द्र वर्मा –

"सूरसागर की भाषा ब्रजभाषा है। यद्यपि एक संग्रह ग्रंथ होने के कारण उसमें इस भाषा के अनेक स्तर मिलते हैं। किन्तु सूरसागर के मुख्य भाग की भाषा शैली अत्यन्त प्रौढ़ तथा साहित्यिक है। सूरदास जी के लगभग एक शताब्दी पहले से ब्रजभाषा में साहित्य रचना होने लगी थी, किन्तु ब्रजभाषा को साहित्यिक भाषा के उच्च सिंहासन पर आसीन करने का श्रेय इस महाकवि को ही प्राप्त है।"

डा० मनमोहन गौतम –

"उनका काव्य में साधारण लोकगीत से लेकर चमत्कार प्रधान कूटकूट पद रचना तक की विविधता मिलती है। इसलिए उनको "ब्रजभाषा का वाल्मीकि" कहना सर्वथा उचित ही है। सूरदास जी ने ब्रजभाषा को जो स्वरूप दिया वह स्थिर रूप से परवर्ती साहित्यकारों द्वारा ग्रहण किया गया।

सूर के द्वारा ब्रजभाषा का संस्कार :–

सूर के पहले भी ब्रजभाषा

संपूर्ण मध्यभारत में छा गयी थी। यह काव्य एवं संगीत के क्षेत्र में पर्याप्त लोकप्रिय हो चुकी थी। सूरदास ने इस जनपदीय भाषा को संस्कार करके उसे साहित्यिक रूप प्रदान किया। डा० चन्द्रभान रावत ने सूर की भाषा की पृष्ठभूमि का निरूपण करते हुए विद्वानों के मतों को उद्धृत किया है — "बज की बंशी की ध्वनि के साथ अपने पदों की अनुपम झंकार मिलाकर नाचनेवाली मीरा राजस्थान की थी, नामदेव महाराष्ट्र के थे। नरसी गुजरात के थे। भारतेन्दु भोजपुरी भाषा के कवि थे। ब्रजभाषा को अपना कर एक से एक कवियों की रस सिक्त वाणी से उसे इतना समृद्ध बना देने वाले पुष्टिमार्ग के आचार्य भी दाक्षिणात्य थे। बिहार में भोजपुरी मगही और मैथिली भाषा क्षेत्रों में भी ब्रजभाषा के कई प्रतिभाशाली कवि हुए हैं। इस प्रकार सारे उत्तरभारत की काव्यभाषा ब्रजभाषा बनी। ब्रजभाषा कच्छ तक समाइत थी। वहाँ के महाराज लखपत बड़े विद्याप्रेमी थे। ब्रजभाषा के लिए उन्होंने एक विद्यालय खोला था। बंगाल के कवियों ने भी ब्रजभाषा में कवितायें लिखी। मराठा पोवाड़ा या युद्धगीत के लेखक भी कभी कभी ब्रजभाषा का प्रयोग करते थे। इस प्रकार एक व्यापक लोकभाषा भक्ति आन्दोलन के साथ सम्बद्ध हो गयी। सूर का संबंध इसी भाषा से है।

सूर के पूर्व भी ब्रजभाषा लोकप्रिय थी। अतः उन्हें ब्रजभाषा की सुदृढ़ पृष्ठभूमि मिली। "सूर की मातृभाषा ब्रजभाषा थी। दिल्ली और आगरे के बीच ब्रजभाषा ही प्रचलित थी। सूर संभवतः अपने जीवन में इस क्षेत्र से बाहर गए नहीं। सूर के पूर्व भी ब्रजभाषा काव्य और संगीत के क्षेत्र में लोकप्रिय हो चुकी थी। सूर ने अपनी प्रतिभा से इस भाषा का विशेष संस्कार किया। उनके पदों की भाषा ब्रज जनपदीय होते हुए भी साहित्यिक है और साहित्यिक होते हुए भी जनपदीय है। इस प्रकार सूर को भाषा की भी सुदृढ़ पृष्ठभूमि मिली।"

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल जी ने ब्रजभाषा के संबंध में लिखा है — "यदि भाषा को लेकर देखते हैं तो वह ब्रज की चलती बोलती होते पर भी एक साहित्यिक भाषा के रूप में मिलती है जो और प्रांतों के कुछ प्रचलित शब्दों और प्रत्ययों के साथ ही पुरानी काव्यभाषा अपभ्रंश के शब्दों को लिए हुए है। सूर की भाषा बिल्कुल बोलचाल की भाषा नहीं है। 'जाको' 'तासो' 'वाको' चलती ब्रजभाषा के इन रूपों के समान ही 'जेहि' 'तेहि' आदि

2

पुराने रूपों का प्रयोग बराबर मिलता है, जो अवधी की बोलचाल में अब तक, पर ब्रज की बोलचाल में सूर के समय में भी नहीं थे। पुराने निश्चयार्थक 'पै' का व्यवहार भी पाया जाता है। जैसे "जाहि लगें सोइ पै जाने प्रेम – अनियारो, गोड़, आपन, हमार आदि पूर्वी पुरबी में पाये जाते हैं। कुछ और आपन हमार आदि पंजाबी प्रयोग भी मिलते हैं जैसे – महँगी के अर्थ में जगीरा ये सब बातें एक व्यापक काव्यभाषा के अस्तित्व की सूचना देती है।"

कृष्णभक्ति संप्रदाय में ब्रजभाषा को पुरुषोत्तम भाषा माना गया और पुष्टिमार्ग के आचार्यों ने इसका विशेष प्रचार एवं प्रसार किया। पुष्टिमार्ग में दीक्षित होने के पूर्व सूर दास्य भाव की भक्ति के अनुरूप दैन्य भावना से युक्त पदों की रचना करते थे। किन्तु महाप्रभु के सम्पर्क में आने के उपरान्त वे भगवत् लीला का गान करने लगे और यह प्रसंग इतना रसमय था कि इसका प्रभाव उनकी भाषा पर भी पड़ा। उनकी भाषा सक्रिय हो गयी।

सूरदास ने ब्रजभाषा का संस्कार किया उसे उत्तम साहित्य रचना के योग्य बनाया। डॉ० मनमोहन गौतम ने ब्रजभाषा के स्वरूप निर्माण में सूरदास के योगदान का विवेचन करते हुए उनकी चार विशेषताएँ बतायी हैं –

1 – ब्रजभाषा को सर्वथा समृद्ध किया। उसका शब्दकोश व्यापक हो गया।
2 – मुहावरे और लोकोक्तियों का सम्यक प्रयोग सूर ने किया।
3 – व्याकरण के रूपों में सूर ने साहित्यिक दृष्टिकोण रखा। बोली में प्राप्त विकल्पों में से अपेक्षाकृत काव्योचित रूपों को ही लिया।
4. भाषा में माधुर्य की ओर सूर का विशेष ध्यान था।

सूर की भाषा का स्वरूप – मित्तल एवं पारीख के शब्दों में –

"सूरदास की कविता के अधिकांश विषय शृंगार एवं वात्सल्य से संबंधित है। अतः उनके काव्य में ओज की अपेक्षा प्रसाद एवं माधुर्य गुण अधिक पाया जाता है। उनमें पांच प्रकार की विशेषताएँ पायी जाती है।

सूर की भाषा की भावानुकूलता –

सूरदास की भाषा की सबसे बड़ी विशेषता भावानुकूलता है। वे रसानुकूल भाषा के प्रयोग में सिद्धहस्त हैं। वीर रस के प्रसंग में उनकी भाषा ओजमयी, परुषवृत्ति तथा गौड़ी रीति से संयुक्त है।

आज जौ हरिहिं न सस्त्र गहाऊँ।
तौ लाजौं गंगा जननी कौं, सांतनु पूत न कहाऊँ।

सरस और मार्मिक प्रसंगों में मधुरावृति की योजना सूर सहज ही कर देते हैं। रूप सौन्दर्य या श्रृंगार का वर्णन करने में सूर की शब्दावली अत्यन्त ललित हो गयी है –

ऐसे हम देखे नन्द नन्दन।
स्याम सुभग तनु पीत वसन जनु मनहुँ जलद पर तड़ित सुछन्दन।

विप्रलम्भ श्रृंगार के अंतर्गत भ्रमरगीत प्रसंग में तो गोपियों में सूर की भाषा कितनी व्यंग्यपूर्ण हो गयी है।

मधुबन बिराने लोग कहाऊ।
दिन दस रहत काज अपने कौं तजि गए फिरे न काऊ।
प्रथम सिखि पढ़ाई हरि हमको, आयो ज्ञान भगाऊ।
हमको जोग भोग कुब्जा को ताको यह सुभाऊ।

सूर की भाषा का शब्दकोश :–

सूर ने अपनी भाषा में संस्कृत के तत्सम शब्दों का प्रचुर मात्रा में प्रयोग किया है। उन्होंने तद्भव तथा विदेशी भाषा के शब्दों को भी प्रयोग में लिया है। उनकी भाषा में जनपदीय रूप भी सुरक्षित हैं अतः स्थानीय तथा गँवारू शब्द भी प्रयुक्त हुए हैं।

तत्सम शब्दों का सूर ने बहुलता से प्रयोग किया है। जहाँ उन्होंने भागवत के आधार पर कुछ तथ्य कथन किया है या अप्रस्तुत योजना की है वहाँ प्रायः संस्कृत के तत्सम शब्दों को ही प्रयुक्त किया है। डा० मुंशी राम शर्मा ने कहा है – "ब्रज की चलती बोली में संस्कृत के तत्सम शब्दों का प्रयोग सूर ने प्रचुरता से किया है जैसे –

गिरिधर, ब्रजधर, माधव, मुरलीधर, पीताम्बर धर।
संख चक्रधर गदा पद्मधर सीसी मकुर धर अधर –